मूल्य का आशय एवं प्रासंगिकता

मानव मूल्य का आशय वैसे मूल्यों से है जो मानव की सोच, व्यवहार एवं कार्य का मार्गदर्शन कर जीवन को परिष्कृत, गरिमापूर्ण एवं सार्थक बनाते हैं। मनुष्य भय, मैथुन, आहार आदि में पशु के समान है, परन्तु मूल्यों के कारण वह मानव कहलाने का अधिकारी बन जाता है। वर्तमान में जीवन के प्रत्येक स्तर एवं प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों का ह्रास हो रहा है। आज समाज के रोल-मॉडल बदल रहे हैं। भ्रष्ट आचरण में लिप्त, धन-बल संपन्न लोग आज सार्वजनिक मंचों पर सम्मान पा रहे हैं। इन सबका गलत संदेश नई पीढ़ी पर जा रहा है। जिसका दुष्परिणाम समाज और राष्ट्र के साथ-साथ सामान्य जन को भुगतना पड़ रहा है। आज एक सामान्य आदमी की धारणा है कि मेहनतकश लोगों का शोषण हो रहा है व झूठ और फरेब का बोलबाला है और इसी कारण जनसाधारण के जीवन में नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति आस्था घट रही है। आज मूल्य संकट की स्थिति उभरकर सामने आ रही है। ***मूल्य संकट*** के बारे में ***डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्*** का यह कथन सही प्रतीत होता है कि- ***"हम यह जानते हैं कि सही क्या है, हम उसकी सराहना करते हैं लेकिन उसे अपनाते नहीं हैं। हम यह भी जानते हैं कि बुरा क्या है, हम उसकी भर्त्सना भी करते हैं फिर भी उसी के पीछे भागते हैं।"***

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मूल्यविहीनता की स्थिति जीवन के सभी क्षेत्रों में दिखाई देती है। परिणामस्वरूप नाना प्रकार की समस्याएँ जैसे- भ्रष्टाचार, लिंगभेद, यौन शोषण एवं उत्पीड़न, जातिभेद, बाल अपराध, धार्मिक वैमनस्य एवं हिंसा, आपराधिक प्रवृत्ति, पर्यावरणीय संकट, आतंकवाद आदि उभरकर सामने आ रहे हैं। इनके समाधान का एक प्रभावशाली उपाय सुशासन की स्थापना करना है। ***सुशासन की स्थापना हेतु शासन (Governance) एवं प्रशासन (Administration) में उच्च मूल्य युक्त नेताओं एवं अधिकारियों का होना तथा जनमानस का अधिकारों के प्रति जागरूक एवं कर्त्तव्यों के प्रति संवेदनशील होना आवश्यक है।*** शासन और प्रशासन का संचालन समाज में पले-बढ़े लोगों द्वारा ही होता है। अत: यदि उनमें प्रारम्भ से ही नैतिकता की जड़े कमजोर हों तो फिर उन्हें भाषण, नैतिक व्याख्यान आदि मात्र से मूल्यपूर्ण नही बनाया जा सकता। ऐसा तभी संभव है जब बचपन से जीवन के विभिन्न स्तरों पर यथा, परिवार, समाज एवं शैक्षणिक संस्थाओं में अच्छे विचारों, आदर्शों एवं मूल्यात्मक आचरण की नींव डाली जाए और उसे जीवन के अभिन्न अंग के रूप में एवं आदत रूप में विकसित किया जाए। आदमी के जैसे विचार होते हैं वैसे ही उसका व्यवहार होता है। लगातार सदाचरण से उन्नत चरित्र का निर्माण होता है। ऐसी स्थिति में इस बात की चर्चा करनी आवश्यक है कि आखिर मूल्यों को कैसे संरक्षित किया जाये और मानव के जीवन में इन्हें कैसे व्यापक एवं प्रभावी रूप से साकारित किया जाये। मूल्यों को संरक्षित करने, ***मन में रोपित करने (Inculcate)*** एवं विस्तारित करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका परिवार, समाज एवं शैक्षणिक संस्थाओं की है।

नीतिशास्त्रीय संदर्भ में मूल्य का आशय भौतिक मूल्य या परिमाणात्मक मूल्य से न होकर जीवन के गुणात्मक पक्ष से संबंधित मूल्यों से होता है। मनुष्य केवल पशु के समान जीना नहीं चाहता बल्कि अच्छी तरह एवं गरिमापूर्ण तरीके से जीना चाहता है। इसके लिए जीवन का मूल्यपूर्ण आवश्यक है। ***मूल्यपूर्ण जीवन ही अर्थपूर्ण जीवन (Meaningful Life) है।*** जीवन स्वयं अपने आप में शुभ नहीं है, बल्कि इसे प्रयासपूर्वक बनाना पड़ता है। इसमें मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका है। ***मनुष्य अपने जीवन में उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को निर्धारित करता है। इस लक्ष्य प्राप्ति में जो आदर्श रूप में सहायक होते हैं, वही मूल्य हैं।***

एक संदर्भ में भोजन, घर आदि भी मूल्यवान हैं क्योंकि ये जीवन रक्षा एवं जीवन वृद्धि में सहायक हैं। परंतु मानवीय मूल्य का वास्तविक आशय उन तत्वों से है जो जीवन को शुभ एवं गरिमापूर्ण बनाते हैं तथा व्यक्तित्व एवं चारित्रिक उत्थान में सहायक हैं। न्याय, स्वतंत्रता, समानता, देशभक्ति, अस्तेय, दया, करूणा, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, सौंदर्य, प्रेम, मैत्री, शील, शुभत्व आदि महत्वपूर्ण मानवीय मूल्य हैं। ये मूल्य स्वस्थ एवं संतुलित सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक हैं। मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति एवं संपूर्ण समाज के व्यवहार को निर्देशित किया जाता है। मानव मूल्य, मानव सोच, व्यवहार एवं कार्य में मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते है। कर्मों के संपादन के क्रम में उत्पन्न होने वाले द्वंद्वों के निराकरण का आधार यही मानवीय मूल्य हैं। दूसरें शब्दों में ***मूल्य वे कसौटियाँ, व्यवहार के पैमाने या मानदण्ड हैं, जिनके आधार पर अच्छे-बुरे, वांछित-अवांछित, सही-गलत, करणीय और अकरणीय का निर्णय किया जाता है।*** इन्हीं मानवीय मूल्यों के अनुसार आचरण करना ही सच्चरित्रता है।

ऐसे मूल्य जिनसे व्यक्तियों को सुख और संतुष्टि प्राप्त होती है, वे व्यक्तिगत मूल्य कहलाते हैं। जैसे:- बागवानी करना, सजना-संवरना आदि। ऐसे मूल्य जो संपूर्ण समाज या मानवता के हितों से संबंधित होते हैं, वे सामाजिक मूल्यों की श्रेणी में आते हैं।

ब्रिटिश विचारक **जॉन लॉक** यह मानते हैं कि जन्म के समय बालक का मस्तिष्क कोरी स्लेट के समान होता है। बालक के ज्ञानात्मक विकास में पारिवारिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। यद्यपि बालक के विकास में आनुवंशिक तत्व की भूमिका होती है परन्तु आनुवंशिकता का महत्व कच्ची धातु के समान है जिसे वातावरण रूपी कारखाना उपयोग के लिए उसका परिशोधन करता है। शिक्षा और संस्कार की दृष्टि से सर्वाधिक महत्व बाल्यकाल का है। बाल्यावस्था में पड़े संस्कार मानस पटल पर स्थायी प्रभाव डालते हैं। यदि मूल्यों का बीजारोपण बाल्यावस्था में परिवार, समाज और शैक्षणिक संस्थानों में सम्यक् प्रकार से किया गया है तो फिर इससे युवावस्था में बालक की अभिवृत्तियों, आदर्श, व्यवहार एवं स्थितियों के अनुसार समायोजन की क्षमता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

भारतीय परंपरा

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में चार पुरुषार्थों की अवधारणा है। 'पुरुषार्थ' का अर्थ है- पुरुष या मनुष्य का लक्ष्य। भारतीय नीतिशास्त्र जीवन के चार उद्देश्यों को स्वीकार करता है। ये चार उद्देश्य या पुरुषार्थ हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें मोक्ष सर्वोच्च पुरुषार्थ है। अन्य तीन पुरुषार्थ इस परम लक्ष्य की प्राप्ति के साधन हैं।

भारतीय संदर्भ में धर्म *(Dharma)* को शाश्वत, सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के रूप में देखा गया है। यहाँ धर्म का आशय स्व-कर्तव्यपालन एवं सद्-आचरण से है। धर्म में नैतिक मूल्यों के संरक्षण, नियमानुकूल सुखभोग, सामाजिक सदाचार, सद्गुण एवं कर्त्तव्य-बोध का भाव निहित है। इसे हम निम्नलिखित बिंदुओं में देख सकते हैं-

- मनु ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं। ये हैं- धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शुद्धि, इन्द्रिय-निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य एवं अक्रोध।
- महाभारत में यह कहा गया है कि *"धारणात् धर्मम् इत्याहु: धर्मो धारयते प्रजा:"*
- अर्थात् जो व्यक्ति को, समाज को, जनसाधारण को धारण करे, वही धर्म है।
- गीता में कहा गया है कि- *"जब-जब धर्म की हानि (मूल्यों का पतन, कर्त्तव्यों की उपेक्षा) होती है, और अधर्म (पाप कर्मों में लिप्तता) बढ़ता है, तब-तब मैं सज्जनों के कल्याणार्थ एवं दुर्जनों के विनाश के लिये अवतरित होता हूँ।"*
- वैशेषिक दर्शन में यह कहा गया है कि जिससे भौतिक कल्याण और आध्यात्मिक उत्थान दोनों हों, वही धर्म है। *("यतोऽभ्युदय नि:श्रेयस सिद्धि: स धर्म:")*
- तुलसीदास भी यह कहते हैं कि *''परहित सरस धरम नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।''*
- 'आचार: परमो धर्म:' (नैतिक नियमों के अनुसार आचरण करना ही परम धर्म है), 'अहिंसा परमो धर्म:' (अहिंसा सबसे उत्तम धर्म है), 'नहि सत्यात् परोधर्म:'' (सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं है) 'धर्मराज युधिष्ठिर' इत्यादि संदर्भ भी धर्म के नैतिक एवं मूल्यात्मक पक्ष को ही इंगित करते हैं।
- गाँधी भी धर्मयुक्त राजनीति की बात करते हैं। उनके अनुसार- *"धर्मविहीन राजनीति नितान्त निंदनीय है।"* यहाँ धर्म का आशय नैतिक मूल्यों से है।

धर्म न तो किसी विशेष दैवीय शक्ति के प्रति प्रतिबद्ध है और न ही वह किसी मजहबी संगठन के घेरे में बन्द है। यही कारण है कि जब पाश्चात्य अवधारणा 'सेक्यूलरिज्म' *(Secularism)* का भारतीय संविधान की प्रस्तावना में हिन्दी रूपान्तरण किया गया तब इसके विकल्प के रूप में 'पंथ-निरपेक्षता' शब्द का प्रयोग किया गया, धर्म-निरपेक्षता शब्द का नहीं, क्योंकि भारतीय संदर्भ में 'धर्म' के अर्थ को ध्यान में रखकर धर्म से निरपेक्ष या तटस्थ नहीं हुआ जा सकता।

धर्म की अवधारणा में नैतिक मूल्य, सदाचार एवं स्वकर्त्तव्य पालन का भाव प्रधान रूप से समाहित हो जाता है। महात्मा गाँधी भी नैतिकता को ही धर्म मानते हैं। धर्म मनुष्य के उन सभी कर्त्तव्यों की समष्टि है जिसके द्वारा मनुष्य इस संसार में मानवोचित जीवन व्यतीत कर सकता है। धर्म से युक्त होकर ही अर्थ और काम के संचालन की बात भारतीय संस्कृति में कही गयी है। वर्तमान समय में धर्मविहीन परंतु अर्थ और काम आधारित भौतिकतावादी संस्कृति के कारण ही भ्रष्टाचार एवं अन्य नाना प्रकार की समस्याएं परिवार, समाज एवं प्रशासन में उभरकर सामने आ रही हैं।

मूल्य विकसित करने में परिवार की भूमिका

परिवार नागरिकता की प्रथम पाठशाला है। यह बालक के समाजीकरण का प्रथम महत्वपूर्ण साधन है जो बालक के सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मूल्यों का प्रथम पाठ व्यक्ति परिवार में ही सीखता है। परिवार वह प्रारंभिक संस्था है जहाँ बालक संस्कारों को ग्रहण करता है। बच्चे का पालन-पोषण जिस वातावरण में होता है, उसका प्रभाव बच्चे के व्यक्तित्व पर पड़ता है। वस्तुत: बाल्यावस्था निर्मल जल के समान होती है जिसे जिस पात्र में रखेंगे वह उसी का स्वरूप ग्रहण कर लेती है। यदि परिवार का वातावरण अच्छा है, परिवार में रहने वाले विभिन्न व्यक्तियों में संबंध (प्रेम, सहयोग, त्याग, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि) सामंजस्यपूर्ण हैं तो बालक के अंदर अच्छे संस्कार विकसित होने लगते हैं और व्यक्तित्व निर्माण में भी मदद मिलती है। यदि परिवार का वातावरण खराब है तो बालक कुसंस्कारों एवं दुर्गुणों का शिकार होने लगता है। स्पष्ट है कि ***बालक को 'क्या अच्छा है और क्या बुरा है' इसका ज्ञान सर्वप्रथम परिवार में प्राप्त होता है।***

नैतिक मूल्यों को सीखने में अनुकरण विधि *(Imitation Method)* का महत्वपूर्ण स्थान है। अत: यदि माता-पिता का आचरण अनुशासनबद्ध है और उनमें कर्तव्यनिष्ठा, उत्तरदायित्व, सच्चाई, ईमानदारी आदि के गुण हैं तो फिर उसका प्रभाव बच्चे पर भी अवश्य पड़ता है। इसके लिए बच्चे पर सामान्य ध्यान देना एवं सामान्य अनुशासन में रखना आवश्यक है।

परिवार मूल्यों को बढ़ावा देने एवं मन-मस्तिष्क में बैठाने में निम्न प्रकार से महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं-

- बालक के मन में नैतिक मूल्यों का विकास करते समय न तो यह दृष्टिकोण उत्पन्न करना चाहिए कि 'सब पुरातन बेकार है' और न ही यह दृष्टिकोण उत्पन्न करना चाहिए कि 'सब कुछ नया अच्छा हैं' वरन् पुरातन मूल्यों एवं नवीन मूल्यों के मध्य सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।
- नैतिक मूल्यों को उपदेशात्मक रूप में क्रियान्वित नहीं किया जाना चाहिए वरन् उन्हें स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में दिनचर्या में शामिल किया जाना चाहिए। अभिभावकों के कथनों से अधिक उनके कृत्यों का प्रभाव बच्चे पर पड़ता है।
- माता-पिता की कथनी एवं करनी में अंतर नहीं होनी चाहिए। इससे बच्चों के मस्तिष्क में द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। जिस प्रकार का व्यवहार वह बच्चों से अपेक्षित करते हैं, उसका उन्हें स्वयं भी आचरण करना चाहिए।
- माता-पिता बच्चों को मूल्य आधारित कहानियाँ पढ़ने एवं सुनने का अवसर देकर उनमें मूल्य विकसित कर सकते हैं। जैसे- पंचतंत्र एवं हितोपदेश की कहानियाँ, वीर बालक, वीर बालिकायें आदि।
- पारिवारिक वातावरण के अनुरूप ही हमारा व्यवहार, मनोवृत्तियाँ, आदतें निर्मित होती है। परिवार के सदस्यों में भावनात्मक संबंध होने पर बच्चों में भी प्रेम और सहयोग की भावना उत्पन्न होती है।
- व्यक्ति के जीवन में परिवार ऐसा स्थल होता है जहाँ संस्कृति का हस्तांतरण *(Transfer point of culture)* होता है। अत: सांस्कृतिक मूल्यों के परिरक्षण एवं पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका है।
- परिवार में यदि कोई वृद्ध व्यक्ति अथवा आगन्तुक नैतिक मूल्यों की बात करता है या अपने व्यवहार में प्रयोग करता है तो उनका उपहास नहीं करना चाहिए।
- परिवार के भौतिक तथा मानसिक वातावरण को सौहार्दपूर्ण होना चाहिए।
- माता-पिता का यह कर्तव्य बनता है कि वह बच्चे को बुरी संगत से अलग रखें अन्यथा आपराधिक प्रवृत्ति का विकास हो सकता है। कई बार बच्चें खेल-खेल में बहुत सी बुरी आदतें सीख लेते हैं। अत: स्वस्थ मनोरंजन के साधन दिए जायें जिससे बच्चे में रचनात्मक प्रवृत्ति प्रबल हो। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में परम्परागत भारतीय पारिवारिक ढाँचे में परिवर्तन हो रहा है। अब भारतीय परिवार संयुक्त परिवार से धीरे-धीरे एकल परिवार की ओर बढ़ रहे हैं। एकल परिवार में कई ऐसे परिवार हैं जहाँ माता-पिता दोनों रोजगार *(Job)* में हैं। ऐसी स्थिति में बच्चे आया या नौकर पर निर्भर हो जाते हैं। नगरीय जीवन में यह कठिनाई विशेष रूप से है। इसी कारण नगरों में छोटे बच्चों के देख-रेख के लिए क्रच *(crèche)* जैसी संस्थाएं अस्तित्व में आयीं हैं। माता-पिता की व्यस्तता, उनका व्यक्तिगत तनाव तथा अपने क्षेत्र में परिणाम दिखाने का दबाव इतना अधिक होता है कि वे बच्चे की आवश्यकताओं एवं

भावनाओं का ध्यान नहीं रख पाते हैं। परिणामस्वरूप बच्चे में एकाकीपन, मानसिक तनाव एवं निष्क्रियता बढ़ती है तथा उसमें औरों के साथ समायोजन की क्षमता, प्रेम और बुजुर्गों का सम्मान जैसी भावनाएं विकसित नहीं हो पाती। इससे उसका व्यक्तित्व भी नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि क्रच जैसी संस्थाओं को नगरीय क्षेत्र में विशेष प्रसार-प्रचार किया जाए और उन्हें समुचित सहायता भी प्रदान की जाएं।

मूल्य विकसित करने में समाज की भूमिका

समाज व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जिसमें मनुष्य एक-दूसरे से संबंधित होते हैं और व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से कुछ सामाजिक रीतियों, परंपराओं एवं मान्यताओं से बंधे होते हैं। समाज सामाजिक संबंधों का ताना-बाना है। ऐसी स्थिति में समाज के सदस्यों के मध्य पाये जाने वाले संबंधों का प्रभाव मानव के मूल्यों पर पड़ता है। यदि समाज में सौहार्दपूर्ण स्थिति है तो व्यक्ति के अंदर प्रेम, सहानुभूति, त्याग, शांति, भ्रातृत्व, सामाजिक एकता आदि मूल्यों का विकास होगा और यदि संबंधों में कटुता है तो फिर जातिवाद, कट्टरता, बाल-अपराध, ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य आदि दुष्प्रवृत्तियों की प्रबलता दिखाई देगी।

सूचना-तकनीकी के युग में अश्लील सामग्री की सहज उपलब्धता बढ़ गयी है। इसका दुष्प्रभाव समाज पर व्यापक रूप से पड़ रहा है। मोबाइल, सीडी, वीडियो, इंटरनेट एवं अन्य अश्लील सामग्री के कारण समाज विशेषकर युवा वर्ग की सोच और दिशा में नकारात्मक परिवर्तन हो रहा है। परिणास्वरूप तात्कालिक शारीरिक सुख की प्राप्ति हेतु छीना-झपटी, छेड़खानी, बलात्कार आदि की घटनाएँ बढ़ रही हैं। भूमंडलीकरण के युग में उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के प्रसार के कारण जीवन शैली एवं जीवन मूल्यों में नकारात्मक बदलाव हो रहा है। भौतिक सुख सुविधाओं को जुटाने एवं तात्कालिक जीवन को सुखी बनाने की होड़ में समाज में मूल्य-अंतर्द्वन्द्व उत्पन्न हो गया है। इस क्रम में मूल्यों का ह्रास हो रहा है और हमारे अन्दर की मानवीयता भी कुंठित हो रही है। यह एक असुरक्षित भविष्य का द्योतक है। यहाँ यद्यपि प्रजातांत्रिक मूल्यों यथा स्वतंत्रता, समानता, न्याय एवं भ्रातृत्व को सामाजिक मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। परंतु भारतीय समाज के सामने अभी भी यह यक्ष प्रश्न बना हुआ है कि आखिर इन मूल्यों को कैसे साकारित किया जाए?

वास्तव में इन मूल्यों की स्थापना तभी संभव है जब जनसामान्य अपने अधिकार के प्रति जागरूक और कर्तव्यों के प्रति संवेदनशील हो। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि समाज में मूल्यों के ह्रास को रोकने एवं उनके परिरक्षण एवं संवर्धन के लिए दोहरा प्रयास किया जाए।

1. **नकारात्मक:** अश्लील सामग्री के वितरण एवं प्रसारण पर कड़ी निगरानी रखी जाए और इससे संबंधित लोगों पर कार्यवाही की जाए एवं विभिन्न इंटरनेट साइटों पर प्रभावी प्रतिबंध लगाया जाए।
2. **सकारात्मक:** समाज में रचनात्मक कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाए। इसमें गैर-सरकारी स्वैच्छिक संगठन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

मूल्यों के संवर्द्धन एवं प्रसारण में सामाजिक परिवेश का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके निम्नलिखित पक्ष हैं–

समाजीकरण (Socialization)

समाजीकरण एक सामाजिक-मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम समाज में रहना और उसका सक्रिय सदस्य बनना सीखते हैं। यह प्रक्रिया ही एक जीवशास्त्रीय मानव को सामाजिक मानव के रूप में बदल देती है। इस प्रक्रिया में मानव समाज के मानदंडों और मूल्यों के साथ-साथ अपनी सामाजिक भूमिकाओं (पति-पत्नी, माता-पिता, मित्र, नागरिक आदि) के संपादन करने की कला सीखता है। सामाजिक सीख की इस प्रक्रिया में परिवार, समुदाय और शिक्षण संस्थाओं की विशेष भूमिका होती है। समाजीकरण के द्वारा बालक संस्कृति की विशेषताओं को सीखता है, समाज के प्रचलित मूल्यों के अनुसार अपने आचरण को ढालता है और तद्नुरूप अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। यदि समाजीकरण की प्रक्रिया नकारात्मक हो तो फिर उसका दुष्परिणाम बाल-अपराधी आदि के रूप में उभरने लगता है। अत: यह आवश्यक है कि समाजीकरण की प्रक्रिया में प्राचीन मूल्यों के साथ-साथ नवीन मूल्यों, मानकों, मान्यताओं एवं व्यवहारों का प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वह व्यक्ति समय के अनुसार अपनी बदलती हुई भूमिकाओं का निर्वाह मूल्याधारित होकर करे।

नागरिकों की पहल (Citizen's Initiatives)

भ्रष्टाचार को उजागर करने, निंदा करने और उस पर नियंत्रण लगाने के लिये नागरिकों की आवाज का प्रभावकारी ढंग से प्रयोग किया जा सकता है। नागरिकों को भ्रष्टाचार की बुराईयों के बारे में शिक्षा देने, रोकने हेतु जागरूकता पैदा करने तथा भ्रष्टाचार विरोधी उनके स्वर को मुखर करने एवं उनकी भागीदारी बढ़ाने का दायित्व सिविल सोसायटी और मीडिया को सौंपने की आवश्यकता है।

सिविल सोसायटी (Civil Society)

ऐसे गैर-सरकारी संगठन (एन.जी.ओ.), सहकारी संस्थाओं, महिला, मजदूर, किसान आदि संगठनों, समुदाय आधारित संगठनों एवं अन्य संगठित समूहों का एक समुच्चय है जो राजनीति, सार्वजनिक नीति और सम्पूर्ण समाज को अपनी क्रियाकलापों से प्रभावित कर न्याय के साथ-साथ सभी नागरिकों को अधिकाधिक स्वतंत्रता देने की वकालत करता है। ये जनकल्याण एवं विकास प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उदाहरणस्वरूप- दिल्ली स्थित एक गैर-सरकारी संगठन ***'परिवर्तन'*** ने सूचना के अधिकार के कानून का प्रयोग कर सार्वजनिक वितरण प्रणाली में हो रहे भ्रष्टाचार को उजागर किया। यहाँ यह पता चला कि जनता के लिये आवंटित चावल, गेहूँ, तेल आदि को खुले बाजार में बिक्री के लिये भेज दिया गया।

सिविल सोसायटी समूहों ने भ्रष्ट आचरणों को सुधारने हेतु सरकार पर दबाव बनाया, साथ ही जनता को शिक्षा देकर भ्रष्टाचार का पता लगाने के लिये निगरानी की प्रणालियाँ विकसित की। इन सबसे आम जनता को स्वस्थ आचरण करने की प्रेरणा भी मिली।

इनकी भूमिका को और प्रभावी बनाने के लिए निम्न उपाय किये जा सकते हैं-

1. भ्रष्टाचार के घटनाक्रमों पर सोसायटी को और शिक्षित एवं जागरूक करना एवं सत्यनिष्ठा में नैतिक वचनबद्धता को बढ़ाना।
2. सरकारी कार्यक्रमों पर निगरानी रखने के लिये सिविल सोसायटियों को आमंत्रित करना।
3. रेडियो, समाचार-पत्रों और दूरदर्शन के माध्यम से सरकार या निजी क्षेत्र द्वारा प्रायोजित लोक शिक्षा और जागरूकता अभियानों की पहल करना।
4. राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों पर नियमित अंतरालों पर समस्याओं पर विचार करने और सभी भागीदारों को लिप्त करते हुए परिवर्तनों के सुझाव देने के लिए सत्यनिष्ठा की कार्यशालाएँ और लोक सुनवाई का आयोजन करना।

सिटीजन चार्टर (Citizen Charter)

सिटीजन चार्टर प्रशासन को जवाबदेह एवं नागरिक-मित्र बनाता है। अब लगभग सभी सरकारी विभागों एवं संगठनों ने अपना अलग सिटीजन चार्टर बना लिया है। चार्टर एक घोषणापत्र होता है जिसमें लोक सेवा संगठन नागरिकों को आश्वासन देता है कि वह अपनी घोषणा में निहित मानदंडों, जैसे निर्धारित समय-सीमा में कार्य को पूरा करते हुए सेवा के उच्च स्तर को प्रदान करेगा। ऐसा करने से पारदर्शिता को बढ़ावा एवं भ्रष्ट आचरण पर रोक लगाने में मदद मिलती है।

मीडिया (Media)

जनसंचार के माध्यम द्वारा भी समाज के सदस्यों में उचित मूल्यों का विकास करने का प्रयास किया जाना चाहिए। इसमें टेलीविजन, आकाशवाणी, दूरदर्शन, विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं, समाचार-पत्र, प्रिंट मीडिया एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

एक स्वतंत्र मीडिया की भ्रष्टाचार को रोकने एवं नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक जिम्मेदार इलेक्ट्रॉनिक एवं प्रिन्ट मीडिया सरकार एवं निजी क्षेत्र तथा सिविल सोसायटी संगठनों में भ्रष्टाचार को उजागर कर, जनमानस को इसके प्रति जागरूक कर, भ्रष्टाचार के प्रति उनकी आवाज को बुलंद कर उन्हें जीवन मूल्यों के प्रति जागरूक कर सकती है।

एक स्वतंत्र, निष्पक्ष और तटस्थ मीडिया जनहित में कार्य करते हुए समाज में निम्नलिखित मूल्यों को बढ़ावा दे सकती है-

1. सामाजिक भेद-भाव एवं बुराईयों के खिलाफ समर्थन जुटाकर सुशासन की स्थापना।
2. प्रशासनिक क्रियाकलापों में पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व बोध को बढ़ावा।
3. जनहित के मुद्दों के प्रति सरकार को जागृत करना।

4. सरकार की नीतियों एवं विकास कार्यक्रमों से जनता को अवगत कर जनसहभागिता को बढ़ाये।
5. सरकार और नागरिकों के बीच दूरी को कम कर शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली-पानी, आवास आदि मूलभूत सुविधाओं के प्रति राज्य को अनुक्रियाशील बनाना।
6. पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना।
7. भ्रष्ट गतिविधियों को उजागर करना।

मीडिया को यह चाहिए कि वह उन्हीं आरोपों और सूचनाओं को जनता के सामने रखे जिनका पहले सत्यापन हो चुका हो। साथ ही सूचनाओं एवं घटनाओं को उनके वास्तविक रूप में प्रकट करना आवश्यक है। मीडिया को ऐसे विज्ञापनों एवं दृश्यों से भी परहेज करना चाहिए जिसका सामान्य जन पर गलत असर जाता हो। जैसे अंधविश्वासों को बढ़ाने वाले कार्यक्रम, महिलाओं को भोग की वस्तु के रूप में लगातार चिन्हित करने या दिखाने वाले विज्ञापन एवं कार्यक्रम आदि। इन सबका प्रभाव यह होता है कि उनके प्रति यही दृष्टिकोण समाज में व्याप्त हो जाता है।

सामुदायिक रेडियो भी एक ऐसा साधन है जो लिंग, जाति और वर्ग आधारित हिंसा के खिलाफ एक माध्यम बनने तथा शासन में पारदर्शिता लाने में सहायक हो सकता है। लोक-कथाओं एवं लोक-संगीतों आदि के माध्यम से जनता का स्वस्थ मनोरंजन करने, व्यक्तिगत अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाने एवं लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रोत्साहित करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

उदाहरणस्वरूप- ***केलू सखी (सुनो सखी)*** इस सामुदायिक रेडियो की शुरूआत 2006 में कर्नाटक में की गयी। इसका उद्देश्य निरक्षर ग्रामवासी महिलाओं तक सूचना एवं ज्ञान पहुंचाना तथा उन्हें शिक्षित करना था। उनके कार्यक्रमों में महिला शिक्षा, स्वास्थ्य, जागरूकता, क्षमता-निर्माण एवं आत्मनिर्भरता प्रदान करने वाले कार्यक्रम होते हैं।

कुंजल पंजे कचजी (कच्छ क्षेत्र के सारस और बगुले) नामक सामुदायिक रेडियो गुजरात के भुज क्षेत्र से 2001 में प्रारंभ हुआ। इसके कार्यक्रमों में महिला नेतृत्व और सुशासन, बालिकाओं को शिक्षा का अधिकार, कन्या भ्रूण हत्या, नव-विवाहिताओं को दहेज के लिए परेशान करने, महिलाओं द्वारा आत्महत्या और अप्राकृतिक मृत्यु, महिलाओं पर सिर्फ पुत्र पैदा करने के लिए दबाव डालने, महिला मृत्युदर और मातृ स्वास्थ्य जैसे विषय शामिल होते हैं। इससे लोगों में समस्याओं एवं उनके निदान के प्रति जागरूकता, समाज में मानवतापरक व्यवहार करने की प्रेरणा मिलती है।

2012 में स्टार एवं दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल पर सामाजिक मुद्दों के प्रति जन-जागरूकता बढ़ाने एवं मूल्यों के प्रति उत्प्रेरित करने संबंधी कार्यक्रम 'सत्यमेव जयते' का प्रसारण किया गया जिसमें कन्या भ्रूण हत्या, यौन अपराध, वरिष्ठ नागरिकों के दुख-दर्द आदि के संदर्भ में जन मानस को जगाया गया। इससे लोगों में ऐसे मुद्दों के प्रति नवीन चेतना का विकास हुआ।

सामाजिक लेखा-जोखा (Social Auditing)

सरकार एवं अन्य संगठनों को अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक करने में सामाजिक लेखा-जोखा का महत्वपूर्ण योगदान है। सभी विकाशील कार्यक्रमों के संचालन और नागरिक सेवा उन्मुखी गतिविधियों में सामाजिक लेखा-जोखा की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि मूल्यविहीन कर्मों को रोका जा सके।

सार्वजनिक सर्वसम्मत्ति बनाना (Universal Acceptance)

समाज को भ्रष्टाचार से मुक्त करने एवं मूल्यों को बढ़ाने में सामाजिक सर्वसम्मत्ति बनाना आवश्यक है। केवल घोषणा-पत्र या कागजी कार्यवाही के स्तर पर इसे क्रियान्वित करने की बजाय व्यवहार के धरातल पर उनको साकारित करने का सकारात्मक प्रयास होना चाहिए।

सामाजिक पूँजी (Social Capital)

विभिन्न अवसरों यथा जन्म, विवाह, मृत्यु आदि विपदाओं के समय (भूकंप, बाढ़, अकाल आदि) नाते-रिश्तेदार, जाति-बंधु, परिवारजन एवं पास-पड़ोस वाले ही पीड़ित व्यक्ति को सहारा देते हैं। यही सामाजिक पूँजी है जो सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत को प्रतिबिंबित करती है। अगर सामाजिक पूँजी की अवधारणा मजबूत हो तो हम सामाजिक जीवन में भी सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों का अनुसरण करते हैं।

सामाजिक अभियांत्रिकी (Social Engineering)

सामाजिक जीवन को अधिकाधिक सुखद एवं मूल्यपूर्ण बनाने के दृष्टिकोण से किये गये नियोजित सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास ही सामाजिक अभियांत्रिकी है। ऐसा माना जाता है कि सरकार समाज के प्रमुख पक्षों को भी मूल्यपूर्ण तरीके से कर्म हेतु प्रेरित कर सकती है। जैसे- समाज में विषमता को दूर करने हेतु, समाज के कमजोर वर्गों, जैसे स्त्रियों एवं दलितों आदि के लिये सकारात्मक भेदभाव की नीति का प्रयोग सामाजिक अभियांत्रिकी का उदाहरण है। इससे सामाजिक समरसता बनाने में मदद मिलती है।

वर्तमान में लोक कल्याणकारी शासन को प्रगतिशीलता के निशानी के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसकी प्राप्ति में प्रशासन की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रशासन शासन का एक उपकरण है। प्रशासन के माध्यम से ही अच्छे शासन के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। स्पष्ट है कि प्रभावी एवं कुशल प्रशासन के माध्यम से जनमानस में सामाजिक-राजनीतिक मूल्यों की स्थापना एवं प्रसार किया जा सकता है। मूल्यों की स्थापना एवं प्रसारण में अनेक सामाजिक गैर-सरकारी स्वैच्छिक संस्थाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

मूल्य विकसित करने में शैक्षणिक संस्थाओं की भूमिका

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है- "हमारे बहुवर्गीय, बहुजातीय, बहुधर्मी समाज में शिक्षा को सर्वव्यापी बनाना चाहिए और शाश्वत मूल्यों को प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि भारतीय जन में राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़े और संकीर्ण सम्प्रदायवाद, धार्मिक अतिवाद, हिंसा, अंधविश्वास व भाग्यवाद को समाप्त किया जा सके।" इसके लिए वैज्ञानिक अभिवृत्ति, समानता, पर्यावरण संरक्षण, प्रजातंत्र, स्वतंत्रता, बन्धुत्व, समाजवाद तथा धर्म-निरपेक्षता आदि मूल्यों की शिक्षा सभी स्तरों (प्रारम्भिक स्तर, माध्यमिक स्तर, विश्वविद्यालय स्तर) पर जरूरी है।

शैक्षणिक संस्थाएँ (जैसे विद्यालय, विश्वविद्यालय आदि) विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक एवं पारिवारिक वातावरण से आये छात्रों को एक-दूसरे को समझने और परस्पर अंतर्क्रिया करने का अवसर प्रदान करती हैं। यद्यपि विद्यालय का प्राथमिक कर्त्तव्य छात्रों को शिक्षा देना है परंतु साथ ही साथ उसका गौण कर्तव्य छात्रों का समाजीकरण करना भी है। छात्रों के व्यक्तित्व निर्माण हेतु केवल विषयगत जानकारी पर्याप्त नहीं है, बल्कि विभिन्न उपायों से छात्रों में मूल्यपरक जानकारी का विकास करना भी आवश्यक है। बिना नैतिक शिक्षा के चरित्र निर्माण संभव नहीं है। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा बालक के दृष्टिकोण, ज्ञान, व्यवहार, आदत एवं चरित्र को स्थायी रूप से आकृति देने या ढालने का प्रयास किया जाता है। प्रायः सभी शिक्षाशास्त्रियों ने स्वीकार किया है कि शिक्षा का उद्देश्य नैतिक विकास भी होना चाहिए। यहाँ कहा गया है कि *''विद्या ददाति विनयम्''* अर्थात् विद्या से विनय प्राप्त होता है। विनय के अंतर्गत शील, सच्चरित्रता आदि गुण आ जाते हैं जिनका संबंध मनुष्य के नैतिक व्यवहारों से है। गाँधीजी का कथन है- ***''वह शिक्षा ही क्या है जिसमें चरित्र निर्माण न हो और वह चरित्र ही क्या है जिसमें व्यक्तिगत पवित्रता न हो।''***

विद्यालय वह सशक्त माध्यम है जो समाज की संस्कृति की सुरक्षा करता है और उसका हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में करता है। विद्यालय के प्रमुख कार्य हैं–

- बौद्धिक प्रशिक्षण
- चरित्र प्रशिक्षण
- नागरिकता की भावना का विकास
- सामुदायिक जीवन का प्रशिक्षण
- देशभक्ति की भावना
- स्वास्थ्य एवं सफाई प्रशिक्षण
- विद्यार्थी को रचनात्मक कार्यों द्वारा अनुभव प्राप्त कराना।
- अधिगम के लिए ऐसा वातावरण उत्पन्न करना ताकि बालक की सृजनात्मक क्षमताओं का सम्यक् विकास हो सके।

विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं (विद्यालय, विश्वविद्यालय आदि) में आयोजित की जाने वाली पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाएं *(Co-curricular Activities)* नैतिक मूल्यों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ऐसी क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य ऐसा सामूहिक एवं व्यावहारिक वातावरण प्रदान करना है जिससे छात्रों में टीम भावना, धैर्य एवं सहनशीलता, सच्चरित्रता एवं ईमानदारी आदि चारित्रिक गुणों का विकास हो सके। जैसे-

खेलकूद संबंधी क्रियाएँ (Play activities & Games)

खेलकूद में बालकों की सामान्यतः स्वाभाविक अभिरूचि होती है। खेलकूद के द्वारा बालक का शारीरिक एवं मानसिक कुशलता का विकास होता है। खेल में बालक या तो विजयी रहता है या फिर पराजयी होती है। इन गतिविधियों एवं परिणामों के द्वारा छात्रों में वांछनीय नैतिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है। जैसे- सहयोग, व्यवस्था, सहनशीलता, शालीनता, हार होने पर प्रतिक्रियावादी न होना तथा जीतने पर घमंड का अनुभव न करना आदि।

प्रार्थना सभाएँ (Morning Prayers)

शैक्षणिक संस्थाओं में विशेषकर विद्यालयों में प्रतिदिन आयोजित की जाने वाली प्रार्थना सभाएं मूल्यों का विकास करने का सशक्त माध्यम है। इस संबंध में डॉ. राधाकृष्णन का विचार है कि- प्रार्थना सभा से पूर्व श्यामपट्ट (ब्लैक बोर्ड) पर दैनिक विचार लिखा जाना चाहिए जिससे छात्रों में स्वचिंतन के मूल्य को विकसित किया जा सके। तत्पश्चात् छात्रों द्वारा प्रार्थना की जानी चाहिए जो किसी विशेष धर्म, राजनीतिक दल या समुदाय का प्रतीक न होकर नैतिकता पर आधारित हो।

जयंती पर्व (Birthday Celebrations)

महान नेताओं, विचारकों व विद्वानों के जन्मदिन को शैक्षणिक संस्थाओं में मनाया जाना चाहिए। इस दिन नाटक, वाद-विवाद, प्रतियोगिता, गीत आदि का आयोजन किया जा सकता है। महापुरूषों के जीवन के प्रेरक प्रसंगों का दृश्य-श्रव्य रूप में अर्थात् व्याख्यान एवं झाँकियों के माध्यम से प्रभावपूर्ण प्रस्तुतिकरण किया जा सकता है। इसका दीर्घकालिक प्रभाव छात्र के जीवन में पड़ता है और वह सामाजिक मूल्यों के प्रति जागरूक होने लगता है। इनके माध्यम से छात्रों में त्याग, कर्तव्यनिष्ठा, देश-प्रेम, सहनशीलता, वैज्ञानिक मनोवृत्ति आदि मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

राष्ट्रीय पर्व (National Festivals)

15 अगस्त, 26 जनवरी और 2 अक्टूबर को हम राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाते हैं। इन पर्वों को शैक्षणिक संस्थाओं को उत्साहपूर्वक मनाना चाहिए। ऐसे अवसरों पर स्वतंत्रता का इतिहास, देशभक्ति के गीत, भारतीय गणतंत्र का इतिहास, संविधान की रूपरेखा, स्वतंत्रता सेनानियों के कृत्यों एवं योगदान की चर्चा कर छात्रों में विश्व-बंधुत्व, राष्ट्रीय चेतना, प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास, कर्त्तव्य संपादन की भावना को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त विद्यार्थी न्यायालय, स्वच्छता पखवारा, समाज-उपयोगी उत्पादक कार्य, चर्चा, जीवनी-पाठन, योग, सर्वोत्तम मूल्यपरक निर्णय और उसके कारण संबंधित प्रश्न, मूल्य स्पष्टीकरण विधि, भूमिका निर्वहन शिक्षण-प्रतिमान *(Role playing model of teaching)*, हितकारी शिक्षाप्रद मनोरंजक शिक्षा रणनीति आदि को बढ़ावा देकर छात्रों में मूल्यों को विकसित किया जा सकता है।

शैक्षणिक जीवन में मानवीय मूल्यों के प्रोत्साहन हेतु विभिन्न आयोगों के सुझाव

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का सुझाव

1948-49 में डॉ. राधाकृष्णनन् की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन हुआ। इनकी भी यह राय थी कि-

1. सभी शिक्षण संस्थाओं का प्रारंभ प्रार्थना सभाओं द्वारा हो जिसमें छात्र दो मिनट का मौन रखें।
2. स्नातक वर्ष के प्रथम वर्ष, द्वितीय वर्ष व तृतीय वर्ष में छात्रों को क्रमशः भारत के विभिन्न धर्मों के प्रमुख नेताओं, विश्व के विभिन्न धर्मों के नेताओं व साहित्य तथा धार्मिक समस्याओं व दर्शन का ज्ञान कराया जाये। आयोग द्वारा दिये गये यह सुझाव अप्रत्यक्ष रूप से मूल्य शिक्षा देने पर बल देते हैं।

धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा समिति का सुझाव

1959 में डॉ. श्री प्रकाश की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ जिसे धार्मिक व नैतिक शिक्षा समिति *(Committee on Religious and Moral Education-Dr. Shri Prakash)* कहा गया। इन्होंने भी छात्रों में उचित आचरण की शिक्षा हेतु निम्न सुझाव दिये-

1. शिक्षा के प्रत्येक कार्यक्रम में परिवार को उचित महत्व दिया जाये व उसके दोषों का उन्मूलन किया जाये।
2. प्राथमिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक पाठ्यक्रम में कुछ ऐसे ग्रंथ रखे जायें जो छात्रों को नैतिक मूल्यों का ज्ञान दें।
3. शिक्षा द्वारा अच्छे आचरण की बातों पर बल दिया जाये व इसी आधार पर छात्रों का मूल्यांकन हो।
4. समाज सेवा पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का अभिन्न अंग हो।
5. छात्रों में वाद-विवादों, स्वतंत्र चिंतन एवं आलोचनात्मक चिंतन के गुणों का विकास किया जाये।
6. विद्यालय में विभिन्न धर्मों के उत्सवों का सामूहिक आयोजन हो जिसके द्वारा छात्रों में वांछनीय नैतिक व आध्यात्मिक मूल्य विकसित हो सकें।

कोठारी शिक्षा आयोग का सुझाव

1964-66 में कोठारी शिक्षा आयोग *(Kothari Education Commission)* का गठन हुआ व आयोग ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षा के द्वारा छात्रों में सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास किया जाना चाहिए और छात्रों को इस योग्य बनाना चाहिए कि वह नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण रख सके। आयोग ने यह भी कहा कि आज के युवकों में सामाजिक व नैतिक मूल्यों के प्रति जो अवहेलनात्मक दृष्टिकोण है, उसके कारण ही सामाजिक व नैतिक संघर्ष उत्पन्न हो रहे हैं इसी कारण हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम शिक्षा व्यवस्था को मूल्य परक *(Value Oriented)* बनायें। आयोग ने जो सुझाव दिये हैं, वे इस प्रकार हैं-

1. केन्द्र व राज्य सरकार के अधीन सभी विद्यालयों में नैतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा दी जाये व निजी संस्थाओं से भी इसका अनुपालन करने की अपेक्षा की जाय।
2. समय तालिका में इन मूल्यों से संबंधित शिक्षा के कुछ समय निर्धारित किये जाये जो किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा न लिए जायें वरन् विद्यालय के सामान्य अध्यापक इस उत्तरदायित्व का निर्वाह करें।
3. विश्वविद्यालय स्तर पर धर्म शिक्षा से संबंधित जो विभाग हैं, वह छात्रों व अध्यापकों की दृष्टि से साहित्य तैयार करें जिनके द्वारा इन मूल्यों का सकारात्मक विकास हो सके।
4. सभी धर्मों के छात्रों के लिए ऐसी पाठ्य-पुस्तकों की व्यवस्था की जाये जो विभिन्न धर्मों के आध्यात्मिक व नैतिक मूल्य का तुलनात्मक ज्ञान करा सकें।

1985-86 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी मूल्य चर्चा के संबंध में तीन बातें कही गयी हैं जो इस प्रकार हैं-

- मूल्यों (सामाजिक व नैतिक) के विकास की दृष्टि से पाठ्यक्रम में संशोधन किया जाये जिससे वह इन मूल्यों का विकास करने का सशक्त साधन बन सके।
- शिक्षा द्वारा सार्वभौमिक व शाश्वत मूल्यों का विकास किया जाये जिससे वह धार्मिक, कट्टरता, हिंसा, अंधविश्वासों का दमन करें।
- मूल्य शिक्षा हेतु ऐसा पाठ्यक्रम बनाया जाये जो मूल्यों का सकारात्मक विकास करे। इसमें राष्ट्रीय विरासत व राष्ट्रीय लक्ष्यों पर बल दिया जाये।

शिक्षकों की भूमिका: ग्रीक दार्शनिक सुकरात का कहना था कि- ***"जिस प्रकार एक दाई गर्भस्थ शिशु को सुरक्षित रूप से बाहर निकालती है उसी प्रकार शिक्षक शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति के मानस में निहित क्षमता एवं पूर्णता को बाहर प्रकाश में लाता है।"***

गंभीर समस्या

भारत में अभी धार्मिक कट्टरता, सांप्रदायिकता, सांप्रदायिक दंगों आदि की स्थिति बढ़ रही है। ऐसी स्थिति का मुख्य कारण समुचित मूल्य-परक शिक्षा का न होना है। व्यक्ति अपने धर्म के प्रति कट्टर और दूसरे धर्म के प्रति वैमनस्य इसलिए पाल लेता है क्योंकि वह अपने धर्म के केवल मजबूत पक्ष को और दूसरे धर्म की केवल कमियों को जानता है। जबकि वास्तव में सभी धर्मों में कुछ सकारात्मक और नकारात्मक पहलू हैं।

अत: यदि छात्र अन्य धर्मों के सकारात्मक पहलू को जानें एवं अपने धर्म की कमियों से परिचित रहें तो फिर वे धर्म के नाम पर हिंसा, कट्टरता या अत्याचार करने का प्रयास नहीं करेंगे। इसके लिए उच्च शैक्षणिक संस्थानों में किसी विशेष धर्म की पढ़ाई की बजाय धर्म-दर्शन की पढ़ाई को अनिवार्य कर देना चाहिए। धर्म-दर्शन में विभिन्न धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, सामान्य तत्वों की खोज की जाती है, विभिन्न धर्मों की बौद्धिक, तार्किक, निष्पक्ष, सर्वांगीण, समीक्षात्मक एवं मूल्यात्मक दृष्टिकोण से विवेचना की जाती है। ऐसी स्थिति में किसी धर्म विशेष के प्रति अंध भक्ति और उसके नाम पर हिंसा करने की प्रवृत्ति पर लगाम लगेगा।

नई पहल

सीबीएसई पैटर्न से पढ़ने वाले छात्र अब भारत की संस्कृति, मूल्य और पुरातत्व से रूबरू होंगे। छात्र अपनी संस्कृति को न भूलें, इस उद्देश्य से सीबीएसई ने इस साल कुछ बदलाव किया है। इस बार 11वीं-12वीं के पाठ्यक्रमों में 'नॉलेज ट्रेडिशन एंड प्रैक्टिस ऑफ इंडिया' विषय को शामिल किया गया है, जिसमें पंडित विष्णु शर्मा रचित 'पंचतंत्र' एवं नारायण पंडित द्वारा लिखित 'हितोपदेश' जैसी कहानियों के माध्यम से बच्चों को नैतिकता का पाठ सिखाया जाएगा। इनमें कथाओं के माध्यम से मनोविज्ञान, व्यावहारिकता, नैतिकता, मूल्य एवं राजकाज के सिद्धांतों से लोगों को परिचित कराया गया है।

बच्चों को नैतिकता का पाठ सिखाने के उद्देश्य से जो नया बदलाव किया गया है, उसके तहत पांच अलग-अलग एक्टिविटी भी होगी। जिसमें पुरातात्विक स्थलों का भ्रमण कराया जाएगा। इसके साथ स्कूल में नाटकों के मंचन के द्वारा भी बच्चों को अपनी संस्कृति के बारे में बताया जाएगा। इन एक्टिविटी को कराने की जिम्मेदारी स्कूलों की होगी।

संस्कृति से जोड़ने वाली एक्टिविटी

- नाटकों का मंचन कर सत्य, अहिंसा, क्षमा की भावना का महत्व स्टूडेंट्स को बताया जाएगा।
- बच्चे धार्मिक ग्रंथों से कहानियों का चयन कर इसे मंचन, पेंटिग या अन्य माध्यमों से प्रस्तुत करेंगे।
- जातक कथाओं की प्रस्तुति देने के बाद स्टूडेंट्स बताएंगे कि कहानी से क्या शिक्षा मिली?
- अलग-अलग विषयों पर छात्र कक्षाओं में चर्चा करेंगे।

आज के बच्चों में नैतिक एवं बौद्धिक ज्ञान की काफी कमी नजर आती है। इसके कारण उनमें अनेक प्रकार की गलत धारणाएं बढ़ रही हैं। स्टूडेंट्स में नैतिकता की कमी भी साफ झलकने लगी है। इन्हें देखकर ही सीबीएसई का यह मानना है कि स्टूडेंट्स को मानवीय मूल्यों के अलावा देश की समृद्ध परंपराओं व प्रथाओं की जानकारी का भी होना आवश्यक है। यही वजह है कि नैतिक एवं बौद्धिक ज्ञान प्रदान करने के लिए पाठ्यक्रम में बदलाव किया गया है। इसका असर भविष्य में देखने को मिलेगा।